ISSN: 2349-4654
नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूज़िक वर्ष : 7, अंक-1, अप्रैल 2019

राजस्थान की प्रसिद्ध लोक गायिका-अल्लाह जिलाई बाई

पूजा

शोधार्थी, संगीत एवं ललित कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Paper recieved on : April 27, 2019, Return : May 04, 2019, Accepted : May 17, 2019

सार-संक्षेप

कुछ प्रसिद्ध राजस्थानी लोकगीत है जिसे देश ही नहीं विदेश में भी प्रसिद्धि हासिल हुई है। जिस कलाकार ने कड़े परिश्रम और अपनी निरंतर साधना से राजस्थानी लोकगीतों की आत्मा को सुरक्षित रखा तथा उन गीतों को बड़ी सहजता से गायन कर श्रोताओं को आनंदित किया वह कलाकार है अल्लाह जिलाई बाई। अल्लाह जिलाई बाई राजस्थान की प्रसिद्ध लोक गायिका है जिनके बारे में लिखने व अध्ययन करने का उद्देश्य यह है कि बाई जी के बारे में ज्यादा से ज्यादा ज्ञान प्राप्त करना तथा श्रोताओं को उनके बारे में ज्ञान प्राप्त करवाना। सबसे अधिक उनके सांगीतिक योगदान को जानना। इनके अतिरिक्त अल्लाह जिलाई बाई जी के बारे में बताने के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—अल्लाह जिलाई बाई जी के लोक गायन शैली को जानना, अल्लाह जिलाई बाई जी के कुछ प्रसिद्ध गीतों का विवरण प्राप्त करना, केसरी चंद मालू जी जिन्होंने बाई के लुप्त हुए गीतों का डिजिटललाईजेशन किया उनके बारे में जानना तथा उनका संगीत कला के क्षेत्र में अल्लाह जिलाई बाई जी का योगदान व सम्मानित पुरस्कारों का विवरण प्राप्त करना। प्रस्तुत शोध-पत्र को लिखने के लिए माध्यमिक एवं तृतीयक स्रोतों का सहारा लिया गया है।

मुख्य शब्द : अल्लाह जिलाई बाई, लोक संगीत, राजस्थान, लोक गीत, केसरिया बालम

शोध-पत्र

राजस्थान एक रंग रंगीला क्षेत्र माना जाता है क्योंकि यह राज्य सदा से ही सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक जनपद होने के साथ-साथ लोकसंगीत की दृष्टि से भी समृद्ध रहा है। स्थानीय लोक संस्कृति की सुंदरता ने यहाँ के लोकमानस को अनेक रूपों में प्रभावित किया है, राजस्थान एक ऐसा राज्य है जहाँ की संस्कृति व सभ्यता की झलक लोकगीतों में स्पष्टरूप से मुखरित होती है और जिसमें असंख्य विषय वस्तु जैसे—जन्म संस्कार से संबंधित गीत, विवाह गीत, मृत्यु गीत, ऋतु संबंधी गीत, देवी-देवताओं के गीत, विविध गीतों में से गोरबंध, मूमल, केसरिया बालम, शौर्य गीत आदि से संबंधित गीत सुनने को मिलते है।

इस रंग-रंगीले राजस्थान में आप चाहे न गए हों, लेकिन यह तय है कि राजस्थान की मिट्टी की खुशबू आप तक कभी न कभी जरूर आयी होगी, कभी दाल-बाटी चूरमा के साथ थाल में सजकर, कभी राजस्थान के पहनावे के साथ, कभी गले में गोरबंद लटकाएँ ऊँट पर सवार होकर और कभी यहाँ के न्योता जाने वाले 'केसरिया बालम' का सुर बनकर।[1] केसरिया बालम अर्थात् एक मीठी सी मनुहार जिसे गाकर पावणों को अपने 'देस' में न्योता जाता है। शायद इस मनुहार की मिठास का ही असर है जो राजस्थान की सूखी धरती की तरफ देशी-विदेशी मेहमान अनायास ही खिंचते चले आते है। अल्लाह जिलाई बाई 'केसरिया बालम' गाने में अत्यन्त अदा की तथा इस गीत प्रसिद्धि दिलवाने में बहुत योगदान किया। अत: अल्ला जिलाई बाई के योगदान को जानना बहुत आवश्यक है।

अल्लाह जिलाई बाई जी का जीवन परिचय व प्रारंभिक शिक्षा

अल्लाह जिलाई बाई का जन्म 1 फरवरी, सन् 1902 को बीकानेर राजस्थान में हुआ था। भारत के राज्य राजस्थान के बीकानेर की यह प्रमुख लोक गायिका थी। 10 साल की आयु से ही उन्होंने हुसैन बख्श से गायन की शिक्षा ली तथा इसके पश्चात् अच्छन महाराज से भी गायन की शिक्षा प्राप्त की। 13 वर्ष की आयु से वह बीकानेर महाराज गंगासिंह के राजदरबार में गायन किया करती थी तथा बाईस वर्षों तक उनकी यजमान रही।

बाई जी एक लोकप्रिय गायिका होने के साथ ही स्वभाव में एक विनम्र कलाकार थी। बाई जी ऐसी थी जो शिक्षित न होते हुए भी सामंती समाज में रहते हुए भी आत्म-निर्भर और आधुनिक महिला होने की मिसाल थी। इनके जीवन निर्णय फौलादी रहे है। वह मांड, ठुमरी, ख्याल तथा दादरा में पारंगत थी। शायद उनका सबसे प्रसिद्ध टुकड़ा मांड राग का केसरिया बालम था जो उन्होंने अपने जीवन के अंत समय तक सबसे ज्यादा गुनगुनाया था।

केसरिया बालम जो राजस्थान की संस्कृति का अभिन्न प्रतीक बन चुका है। ढोला-मारू की प्रेम कहानी से जुड़ा यह लोकगीत न जाने कितनी सदियों से राजस्थान की मिट्टी में रच-बस रहा है। परन्तु माटी के इस गीत को सम्मान के सर्वोच्च शिखर तक पहुँचाने वाली महिला अल्लाह जिलाई बाई जिन्हें पूरी दुनिया में मरू कोकिला और बाई जी के नाम से जाना जाता है। राजस्थान में बारिश की कमी को पूरा कर देते है अल्लाह जिलाई बाई जी के ये भीने-भीने स्वर। कहते है कि मरूस्थल की इस बेटी की मखमली आवाज़ जब बियाबान रेगिस्तान में गूँजा करती थी तो जैसे यहाँ की बंजर धरती की आत्मा भी तृप्त हो जाती थी।

महाराजा गंगासिंह ने अपने जीवन और शासनकाल में लोककल्याण के लिए कई काम किए थे। परन्तु उनके दो अविस्मरणीय योगदान ऐसे थे जिनके लिए कहा जाता है कि मरूभूमि सदैव उनकी ऋणी रहेगी। सन् 1927 में महाराज गंगासिंह ने पंजाब से राजस्थान तक 'गंगनहर' का निर्माण करवाया जिससे वह मरूस्थल के भागीरथ के नाम से जाने गए। गंगनहर के अलावा महाराज ने प्रदेश को जो दूसरा बेशकीमती तोहफा दिया वे थी खुद-अल्लाह जिलाई बाई।

अल्लाह जिलाई बाई जी के प्रसिद्ध गीतों का विवरण

अल्लाह जिलाई बाई जी ने अपनी जीवन यात्रा के दौरान अलग-अलग पड़ावों पर कई बेहतरीन नगमे गुनगुनाए थे लेकिन मांड शैली में गाए उनके 'केसरिया बालम' को श्रोताओं का सबसे ज़्यादा प्यार नसीब हुआ और होता भी क्यूँ नहीं! राजस्थान की इस बेटी ने इस गीत को गाया ही इस अंदाज से था कि वीरता और पराक्रम का प्रतीक केसरिया भी मानो बाई जी के स्वर पाकर पहले से कहीं ज्यादा उज्जवल हो गया था। इसके पश्चात् यह गीत टूरिस्ट और सांगीतिक पटल पर राजस्थान की सबसे बड़ी पहचान हो गया या यह भी कहा जा सकता है कि भारत की पहचान बहुत हद तक इस गीत (केसरिया बालम) से मानी जाती है।

केसरिया, मूमल, बाई सा रा बीरा, काली काली काजलिए री रेख, गोरबंद, परिहारिन आदि सब बाई जी के कंठ से निकले प्रसिद्ध गीत है बाई जी के कुछ प्रसिद्ध गीत इस प्रकार है—

केसरिया बालम

केसरिया बालम आओ नि पधारो म्हारे देस
नि केसरिया बालम आओ सा पधारो म्हारे देस
पधारो म्हारे देस आओ म्हारे देस नि
केसरिया बालम आओ सा पधारो म्हारे देस
मारू थारे देस में निपूजे तीन रतन...
एक ढोलो, दूजी मारवन, तीजो कसूमल रंग[2]

इस गीत को बाई सा ने मांड शैली में गाया था। मांड लोक जीवन से जुड़ी हुई वह शैली है जिसके आलाप से अपने देस और अपनी मिट्टी की महक आती है।

बाई सा रा बीरा

म्हाने पीवरीए ले चालो सा
पीवरीए री म्हाने ओलू आवे...[3]

इस गीत में बहु ससुराल से पीहर जाने का अनुरोध करती है। उस समय मोबाइल नहीं हुआ करता था, चिट्ठी लिखनी नहीं आती थी क्योंकि वह शिक्षित नहीं थी, तब लड़की अपने पीहर साल-दो-साल या तीन साल बाद ही जा पाती थीं उस समय विवाह और ससुराल की तमाम जटिलताओं का कोई उपाय न होता था, ऐसे में लड़की का पीहर जाना सौ सुखों से बढ़कर होता था। 'छोटी सी उमर क्यों परणाई रे बाबोसा' गीत को सुनकर हर व्यक्ति की आँखों से आँसू फूट पड़ते है। 'बाई सा रा बीरा...' उसी भाव का गीत है जिसमें पीहर लौटने की बात है जो अग्रदृष्टि (प्रतीक्षा) और खुशी के बीच के भाव को दर्शाता है।

मूमल

काली काली काजलिए री रेख जी,
कोई भूरोड़े बादल में चमके बीजली,
ढोले री मूमल हालो नी री,
जणो ढोले से देस।[4]

'मूमल' यह एक स्त्री का नाम था जिसे अमरकोट के राजकुमार महेंद्र से प्रेम था। इनका जीवन बहुत सी गलतफ़हमियों से गुजरा। इनके प्रेम की वो तड़प बाई जी की आवाज़ में सुनाई पड़ती है। इन गीतों के गहरे मायने है। बाई जी को सुनते समय कभी बेचैन मन तो कभी खुशी का झरना भीतर फूटता महसूस होता है।

राजस्थान की इस मिली-जुली तहजीब को हमेशा अपने दिल में संजोए बाई जी और उनकी आवाज़ बीकानेर राजपरिवार में नई किलकारी गूंजने से लेकर शाही बारात के स्वागत तक तमाम हिंदू रस्मों से कभी न अलग होने के लिए जुड़ चुकी थी।

'केसरिया बालम आओ नी, पधारो म्हारो देश' मांड गायन में एक ऐसा गीत है जिसमें राजस्थान की लोक संस्कृति की सुंगध भरी है। इस गान की जब कहीं चर्चा होती है तो साथ में अल्लाह जिलाई बाई का ज़िक्र भी होता है। अल्लाह जिलाई बाई ने इसी के जरिए बेशुमार शोहरत हासिल की। बीते ज़माने की रसभरी गूंज आज भी ऑडियो के जरिए हमें विभोर कर देती है। राजस्थान के बीकानेर शहर में अपने जीवन के बाकी साल गुज़ार रही अल्लाह जिलाई बाई आज इस बात को लेकर बहुत परेशान है कि उनके साथ ही यह कला दफन हो जाएगी।

रियासती राज का सूर्यास्त होने पर भले ही वे कुछ समय के लिए गुमनामी के अँधेरे में छिप गई पर देश की प्रसिद्ध रिकार्ड कंपनियों ने उनके जादुई स्वर के रिकार्ड बनाए और कला पारखियों ने इस कोकिला के स्वर को समय-समय पर सम्मानित किया। 1982 में भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री की उपाधि दी। दूरदर्शन ने इस सुर मल्लिका पर एक वृत्त चित्र भी बनाया। इस महान गायिका से पिछले दिनों बीकानेर में हुई

बातचीत के दौरान जब पूछा गया कि आप मांड के लुप्त होने से इतना चिंतित है पर आपने महाराजा गंगासिंह को प्रशिक्षण केन्द्र खोलने की सलाह क्यों नहीं दी, क्या वे आपकी सहायता नहीं करते। इसके जवाब में वे कुछ उदास होकर कहती हैं—भूल तो मेरी है।

अठाईस साल तक उनकी सेवा की। मैंने कभी गंगासिंह जी से कहा ही नहीं, कहा होता तो शायद हम कुछ पाते भी। राजे रजवाड़े ही इस कला की कद्र करना जानते थे। आज नगीनों का पारखी कहाँ, बस ज्यादा से ज्यादा टीवी पर नाम दे दिया या किसी कार्यक्रम में बुलाकर सम्मानित कर दिया। आर्थिक दृष्टि से भी हम जैसे कलाकारों को कोई मदद नहीं मिलती।

अल्लाह जिलाई बाई नब्बे को पार कर चुकी थी और अब साक्षात्कार में भी ज्यादा रुचि नहीं दिखाती। मांड की परम्परा का ज़िक्र छिड़ने पर वे कहती है, राजस्थान की गायन शैली है—मांड। यह एक प्रकार का राग है, इसकी परम्परा कितनी पुरानी है इसे जानने और समझने की मेरी कभी कोई कोशिश नहीं रही। मांड के प्रति रूझान के बारे में वे बताती है कि मेरी बुआ दरबार बीकानेर महाराजा गंगासिंह जी के समय में गाने के स्कूल में नौकरी करती थी। मैं जब आठ-नौ वर्ष की हुई बुआ का इंतकाल हो गया। एक दिन लड़कियों के साथ खेलते हुए मैं गा रही थी। मेरे उस्ताद हुसैन बख्श वहीं बैठे थे, उन्होंने कहा, यह लड़की मुझे दे दो, मैं इसे गाना सिखाऊँगा। वे मुझे म्यूज़िक स्कूल ले गए। गाना सिखाया। महाराजा गंगासिंह के सामने एक दिन गवाया। उन्होंने मुझे म्यूज़िक स्कूल में रखने का आदेश दिया और अपने उस्ताद के कारण ही मैंने यह शिक्षा पाई।

दरबार में पुरुषों के बीच गाने के बारे में वे कहती हैं, देखिए बाईस साल मैंने बीकानेर राज घराने में नौकरी की और महाराजा गंगा सिंह जी की सेवा में अपनी कला को समर्पित करती रही। कभी भी ऊपर देखकर नहीं गाया। हमारी महारानी पर्दे में रहती थी। दरबार बाहर लगा रहता था। स्त्रियों पर बहुत बंदिशें थी। हर औरत आबरू से रहती थी। दरबार तक में भी पर्दे में जाती थी। मुँह खोलकर सड़क पर नहीं घूमती थी। सर पर पल्लू रहता था। केसरिया और कसूमन (लाल) परिधान रहता था। बोर सिर पर बाँधा जाता था। आस-पास कभी आँख उठाकर भी नहीं देखा, फिर मेरे अन्नदाता के रहते कौन मेरी ओर आँख उठाकर देख सकता था। डर के मारे किसी की हिम्मत नहीं होती थी कि हमसे कुछ कहे या निरादर करें। मुझे कोई संकोच नहीं था कि पुरुषों के बीच बैठकर मैं गा रही हूँ क्योंकि गंगासिंह जी से सब डरते थे।

दरबार में गायन के बारे में वे बताती है कि महल में विशेष अवसरों पर या राजाओं की शादी और सालगिरह पर मैं गाती थी। फौज में भी हमें कार्यक्रम के लिए बुलाया जाता था। महाराजा गंगासिंह की पसंद से ही मैं गाती थी। 'देसड़ो, देसड़ो म्हारो, म्हाने बालों लागै' गीत गंगाजी को बहुत प्रिय था। खास मेहमान के सामने इस गीत को जरूर सुनवाया जाता था।

बड़ौदा की गंगू बाई, ईदन बाई पालनपुर की टोकी बाई और सिरी बाई और जयपुर की गौहर बाई और बिब्बो बाई के संगीत सुर मुझे बहुत प्रेरणा देते थे। मैंने उदयपुर, कोटा, जयपुर और जोधपुर जैसी बड़ी रियासतों में अपनी कला की प्रस्तुति की है। यहाँ पुरस्कार मिले और शोहरत भी खूब मिली। अल्लाह जिलाई बाई का कहना है कि उनके साथ गाने वाली महिलाओं में बख्ताबरी, छगनी, मगनी, मैना, रतन, ज्योत, सरस्वती व लाधि आदि नाम प्रमुख है लेकिन अधिकतर वे अकेले ही गाया करती थी। दरबारी गायकी और आज के थियेटर शो के अंतर को स्पष्ट करते हुए वे बताती है कि दरबारी गायकी में सिर्फ एक ही व्यक्ति को प्रसन्न करना पड़ता था। उस समय बिना पैसों के शिक्षा दी जाती थी और कलाकार पूर्ण सम्मान का अधिकारी होता था। आज तो शिक्षा पैसों के बल पर खरीदी और बेची जाती है।

उन्हें पद्मश्री, सुरमल्लिका और मरू कोकिला आदि उपाधियों से सम्मानित किया जा चुका है। इस पर फ़क्र करते हुए वे कहती हैं—मुझे तो बहुत ज्यादा मिला है। मैं तो सोच भी नहीं सकती थी कि इतना कुछ पा सकूँगी।

अल्लाह जिलाई बाई मांड की एकमात्र गायिका हैं। महाराजा गंगासिंह जी की रियासत समाप्त होने के बाद भी लुप्त होने लगा। इस राग को किसी ने नहीं सीखा यहाँ तक कि अल्लाह जिलाई बाई के परिवार के किसी सदस्य ने भी नहीं। निजी प्रशिक्षण केन्द्र खोलकर मांड सिखाए जाने के सवाल पर वे कहती हैं—मैं तो आज भी तैयार हूँ सिखाने के लिए। मुझे कोई शिष्य नहीं मिला जो इस परम्परा को आगे ले जाए। केन्द्र तथा राज्य सरकार को कई पत्र लिखे कि सेंटर खोल दें और साजो सामान उपलब्ध करवा दें तो मैं प्रशिक्षण दे सकूँ किन्तु किसी ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। सीखने की लगन तो अपनी होती है, जबरन किसी पर लादा नहीं जा सकता। घर में किसी की रुचि ही नहीं थी, न अब है। सब अपनी धुन में मस्त है। मुझे इस चीज़ से बहुत पीड़ा है। मरते दम तक मेरी यही तड़प रहेगी कि सरकार ने मांड संगीत को जिंदा रखने के लिए मेरा सहारा क्यों नहीं लिया।[5]

केसरी चंद मालू का योगदान

केसरी चंद मालू उस वीणा म्यूज़िक कंपनी के मालिक हैं जिसने बाई जी के लुप्तप्राय हो चुके गीतों को जुटाकर फिर से दुनिया के सामने पेश किया है। उन्होंने पद्श्री से सम्मानित होने के मौके पर बाई जी के साथ राजस्थान से दिल्ली तक का सफर तय किया था। बीते दिनों को याद करते हुए वे बताते है, 'उन दिनों कला का राजनीतिकरण नहीं किया जाता था, संगीत को ईश्वर की आराधना समझा जाता था। उस जमाने में अधिकतर कलाकार मुस्लिम ही हुआ करते थे जो शिव से लेकर कृष्ण तक की प्रशंसा में अपनी आवाज़ से श्रद्धासुमन अर्पित करते थे, चाहे गणगौर हो या तीज, ये मुस्लिम कलाकार हमारे त्यौहारों को अपना समझ कर ही मनाते थे।

केसरी चंद मालू आगे बताते हैं कि अल्लाह जिलाई बाई बीकानेर राजदरबार का अभिन्न अंग थी, चाहे किसी कुंवर के जन्म पर हालरिया (स्थानीय लोरी गीत) गाने हों या शाही बारात का डेरा (गाँव के बाहर बारात आकर रुक जाती थी) देखने जाते समय 'जल्ला', अल्लाह

जिलाई बाई अपनी जादुई आवाज़ से इन मौकों को बहुत खास बना देती थी। वे यह भी बताते हैं कि बाई जी द्वारा तकरीबन दसियों तरह से गाया केसरिया बालम का संग्रह उनके पास मौजूद है।

बाई जी के गीतों के संग्रह को लेकर भी बेहद दिलचस्प किस्सा जुड़ा हुआ है, केसरी चंद मालू बताते है, ''उस दौर में तकनीकें इतनी विकसित नहीं थी और न मैं खुद को इस लायक समझता था कि बाई सा से हमारे लिए रिकॉर्डिंग के लिए कह सकूँ। लेकिन बाई जी के जाने के बाद अहसास हुआ कि हमने क्या खोया है। हमेशा फिक्र सताती थी कि कैसे आने वाली पीढ़ियों को बाई जी और राजस्थान की संस्कृति के बारे में बताया जाएगा क्योंकि अल्लाह जिलाई बाई ने 'केसरिया बालम' अधिकतर रेडियो के लिए ही गाया था और उसकी रिकॉर्डिंग बहुत अच्छी गुणवत्ता में उपलब्ध नहीं थी। फिर एक दिन केसरी चंद मालू को किसी सज्जन ने बताया कि भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) के एक अधिकारी भीमसिंह जी के पास बाई सा के पुराने बिरले गीतों का कलेक्शन मौजूद है। वे भीमसिंह जी के घर पहुँच गए, लेकिन तमाम मिन्नतों के बाद भी भीमसिंह ने उन्हें यह संग्रह देने से इनकार कर दिया। लेकिन मालू साहब भी बाई सा के गीतों को पाने की ठान चुके थे। इसी बीच भीमसिंह जी का स्वर्गवास हो गया और उनके बाद उनके बेटों ने बाई जी और राजस्थान की संस्कृति के प्रति केसी मालू का अटूट प्रेम और समर्पण देखकर उन्हें भीमसिंह जी का अद्‌भुत संग्रह दे दिया। वे बताते हैं कि उस संग्रह के खास गीतों की साउंड क्वालिटी सुधारने की लंबी प्रक्रिया के बाद उनका डिजिटललाइजेशन किया गया और फिर सीडी के जरिए श्रोताओं के लिए उपलब्ध करवाया गया।[6]

अल्लाह जिलाई बाई का योगदान व सम्मानित पुरस्कार

महाराज गंगासिंह के स्वर्गवास के बाद अल्लाह जिलाई बाई पूरे देश के लिए ऑल इंडिया रेडियो के माध्यम से अपनी प्रस्तुति देने लगी थी। रंग-रंगीले राजस्थान का चेहरा बन चुकी इस कलाकार को संगीत कला के क्षेत्र में सन् 1982 में भारत सरकार ने उन्हें पद्‌मश्री से सम्मानित किया। सर्वोच्च नागरिक पुरस्कारों में से एक उन्हें लोक संगीत के लिए सन् 1988 में संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया है। सुर मल्लिका तथा मरू कोकिला उपाधियों से भी बाई जी को सम्मानित किया गया। 3 नवम्बर, सन् 1992 को अल्लाह जिलाई बाई की मृत्यु हो गई उसके पश्चात् राजस्थान सरकार ने 31 मार्च, सन् 2012 को प्रथम राजस्थान रत्न सम्मान देने की घोषणा की।[7]

अल्लाह जिलाई बाई जी की मृत्यु के पश्चात् हर साल 3 नवम्बर को अखिल भारतीय मांड समारोह आयोजित किया जाता है। बीकानेर के सरदार पटेल मेडिकल कॉलेज के डिपार्टमेंट ऑफ मेडिसिन के हेड रहे डॉ. सुलेमानी यहाँ अल्लाह जिलाई बाई मांड स्कूल ऑफ म्यूज़िक चलाते है। फ्री में मांड गायन का प्रशिक्षण दिलवाते है। डॉ. सुलेमानी कहते हैं, मांड उत्सव मनाने के साथ हमारी कोशिश होती है कि बाई जी की और मांड गायकी की विरासत को कायम रखा जा सके।[8] आज देखते है कि टीवी पर भी गायक इसे गाते हैं। मांड का नाम लिया जाता है। स्कूलों में गैर-पेशेवर बच्चे भी इन गीतों को प्रस्तुत करते हैं।

निष्कर्ष

इस विज्ञान और ग्लोबलाईजेशन में आज के युवक अपने आर्थिक हालात सुधारने व धन कमाने के लिए लोक संगीत को व्यापार के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं। आज का साधारण कलाकार भी लोक गीतों को उठाकर उसे कलात्मक पक्ष देकर स्टूडियों में जा कर थोड़े पैसे देकर अपने-अपने कैसेट बनाकर रिलीज़ करवा लेते हैं। लोकगीतों और उनकी धुनों में भी बदलाव कर दिया जाता है जिससे राजस्थान के गीतों की शुद्धता खत्म हो रही है। मेरे इस शोध के जरिए मैं श्रोताओं को यह बताना चाहती हूँ कि जिस तरह से अल्लाह जिलाई बाई जी ने अपने आर्थिक हालात को देखते हुए अपने गायन में जो कड़ी मेहनत दिखाई है जो उनके गीतों में साफ झलकती है जिसने राजस्थान के लोकगीतों को ऊँचाई तक पहुँचाया है। उसी तरह की मेहनत आज की युवा पीढ़ी करे, बिना राजस्थानी लोकगीतों की शुद्धता को खत्म किए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भार्गव, उमेश, भोपा लोकगीत एवं सामाजिक संरचना, लिट्रेरी सर्किल, जयपुर, पृ. 5
2. http://www. thelalantop. com accessed on 5 May 2019, 5.00 PM
3. वही
4. वही
5. जनसत्ता, दिल्ली, 1992
6. सत्याग्रह पत्रिका, पुलकित भारद्वाज, 01 फरवरी, 2019
7. http://hihindi. com/allah-jilai-baiaccessed on 5 May 2019, 6.00 PM
8. वही